© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 04 , Issue : 13 | October – December 2017

उदय प्रकाश की कहानियों में धार्मिक तत्त्व

शोध–निर्देशक :

प्रो. कृष्णमोहन झा
हिन्दी विभाग
असम विश्वविद्यालय, सिल्चर

शोधार्थी :

सत नारायण
पंजीयन संख्या :
पी.एच.डी./2746/15
असम विश्वविद्यालय, सिल्चर

वास्तव में धर्म सामाजिक और सांस्कृतिक मान्यता प्राप्त विश्वास ही होता है जो मानव समाज को अपनी पूर्व पीढ़ियों से सामाजिक विरासत के रूप में प्राप्त होता है। मानव बिना किसी को ठेस पहुँचाए सात्विक रूप से अपने जीवन कार्य करे और मानव कल्याण में संलग्न रहे, यही इसका उद्‌देश्य होता है। उसी के आधार पर जीवनक्रम को निर्धारित किया जाता है। धर्म आकस्मिक आपदाओं के समय मानव का संबल भी बनता है। इस सबके लिए धर्म में व्रत–उपवास, पूजा–पाठ, कर्मकांड, मंत्र–तंत्र, भजन–कीर्तन, मनौती, तीज–त्योहार, विवाह–अनुष्ठान, परंपरा आदि को स्थान दिया गया है और मानव के आदर्श जीवन जीने के लिए कुछ नियम निर्धारित किए गए हैं। लेकिन समाज में आए अप्रत्याशित बदलाव के कारण मानव स्वार्थी, लालची और धन–लोलुप हो गया है। वह अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए धर्म और उसके नियमों का दुरुपयोग करने लगा है। लोगों ने धर्म को सर्वकल्याण की अपेक्षा स्वार्थ का अड्‌डा बना दिया है। परिणामस्वरूप धर्म ने विकृतियों का रूप धारण कर लिया है। धर्म के नाम पर लोगों को डराया जाता है। पाप–पुण्य और शकुन–अपशकुन का डर दिखाकर कर्मकांडी लोग भोले–भाले और गरीब लोगों से धर्म के नाम पर अनचाहा कर्म करवाते हैं। इन सब बातों को महसूस करने के बाद मन ग्लानि से भर जाता है। इसमें परिवर्तन लाने के लिए बार–बार मन में विचार पैदा होते हैं। मन की इस अवस्था की संवेदना को जागृत करने का प्रयास सजग रचनाकार अपनी रचनाओं के माध्यम से प्राचीन काल से करते चले आ रहे हैं।

डॉ. भटनागर धार्मिक संवेदना पर विचार प्रकट करते हुए कहते हैं कि **–"धार्मिक संवेदना समस्त मानव जाति की मूलभूत अनुभूतियों का और सुख–दुख का सुंदर मिलाप है।"1** जबकि महीप सिंह सम्प्रदाय या धर्म में रहकर उसका पालन करते हुए साम्प्रदायिकता और अंधधार्मिकता से दूर रहने को गलत नहीं मानते। उनके अनुसार **–"जैसे सम्प्रदाय में रहकर साम्प्रदायिकता से मुक्त होना एक सकारात्मक जीवन–दृष्टि है, उसी प्रकार धर्म में आस्था रचाते हुए धर्मनिरपेक्ष होना एक स्वस्थ मानसिकता का परिचायक है। धर्मनिरपेक्ष होना धर्म–विरोधी होना नहीं है।"2** रचनाकार अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में आयी विकृतियों को सशक्त ढंग से व्यक्त करता है और उसमें अपेक्षित सुधार की माँग करता है। उदय प्रकाश ने भी अपने कथा–साहित्य के माध्यम से समाज में आई धार्मिक–विकृतियों पर करारा व्यंग्य किया है और ऐसी विकृतियों के खिलाफ जागरूकता फैलाने का काम किया है। उनका कथा–साहित्य स्वयं समाधान न सुझाकर सुधि पाठकों से ही निर्णय और समाधान करने की अपेक्षा रखता है। धार्मिक रूढ़ियों पर प्रहार उनके कथा–साहित्य में हर जगह दिखाई देता है।

गाँव के लोगों का जीवन रूढ़िगत मान्यताओं, अंधश्रद्धा और अंधविश्वासों से जकड़ा होता है। वहाँ तर्क या विज्ञान की अपेक्षा किवदंतियों के आधार पर जीवन–निर्वाह होता है। 'तिरिछ' कहानी में यह अंधविश्वास या अंधश्रद्धा स्पष्ट तौर पर झलकती है। वैज्ञानिक प्रमाण न होने के बावजूद गाँव के लोगों का विश्वास करना कि तिरिछ में साँप से सौ गुना ज्यादा ज़हर होता है और वह छेड़ने की अपेक्षा नज़र मिलते ही काट लेता है। कहानी के अनुसार–**"दरअसल जब आदमी भागता है तो ज़मीन पर वह सिर्फ अपने पैरों के निशान ही नहीं छोड़ता बल्कि हर निशान के साथ वहाँ की धूल में अपनी गंध भी छोड़ जाता है। तिरिछ**

इसी गंध के सहारे दौड़ता है। थानू ने बतलाया कि तिरिछ को चकमा देने के लिए आदमी को यह करना चाहिए कि पहले तो वह बिल्कुल पास–पास कदम रखकर जल्दी–जल्दी कुछ दूर दौड़े फिर चार–पाँच बार खूब लंबी–लंबी छलाँग लगा दे।''3 गाँव के लोग तर्कहीन और अनदेखी बातों पर ज्यादा विश्वास करते हैं। तिरिछ के काटने पर पहले पेशाब में कौन लेटता है या फिर कौन नहाता है, इसी बात का प्रमाण है। **''जैसे ही वह आदमी को काटता है, वैसे ही वह वहाँ से भागकर किसी जगह पेशाब करता है और उस पेशाब में लोट जाता है। अगर तिरिछ ने ऐसा कर लिया तो आदमी बच नहीं सकता। अगर उसे बचना है तो तिरिछ के पेशाब में लोटने के पहले ही, खुद किसी नदी, कुएँ या तालाब में डुबकी लगा लेनी चाहिए या फिर तिरिछ के ऐसा करने के पहले ही उसे मार देना चाहिए।''4**

हमारे समाज में भूत–प्रेतों और टोने टोटकों पर भी विश्वास किया जाता है। इसे लेखक ने 'हीरालाल का भूत' और 'छप्पन तोले का करघन' में बखूबी दर्शाया है। पागल कुत्ते के काटने पर बिना इलाज़ के जब हीरालाल मर जाता है और उसे जलाया जाता है तो गाँव के लोग उसकी पत्नी फुलिया के गर्भ से कुत्ते के रूप में हीरालाल का भूत निकलते हुए देखते हैं। **''एक भूतही परछाई सारे गाँव पर छा गई थी। तभी गाँव की औरतों ने देखा कि फुलिया के गर्भ से एक काला झबरैला, पीली आँखोंवाला कुत्ता बाहर निकला और हवेली की ओर भाग गया।''5** गाँव वालों की मान्यता है कि ठाकुर हरपाल सिंह और पटवारी द्वारा खुद और अपनी पत्नी के किए गए शोषण का बदला वह जीते जी तो ले नहीं पाया लेकिन भूत बनकर जरूर लिया। वह हवेली में रहने वाले सभी सदस्यों को तंग करने लगा। इसके बारे में कहानी में एक किस्सा है। **''सरला बेबी ही नहीं, मँझली ठकुराइन और विमला मालकिन के भी कपड़े रात में उतर जाते और कोई सब–कुछ कर जाता। ठाकुर साहब के लिए खाना परोसा जाता और जैसे ही वह खाने के लिए बैठते तो उन्हें हर चीज़ से मल की तेज़ गंध उठती हुई लगती। उन्हें उल्टी होने लगती। दाल का कटोरा खून से भरा हुआ दिखाई देता। बैंगन कुत्ते के मांस में बदल जाता। सुबह उठते तो बिस्तर में हड्डियाँ मिलतीं। सरला बेबी को तो मिरगी के दौरे पड़ने लगे और वह लगभग पागल जैसी हरकतें करने लगीं। कभी–कभी वह नंगी होकर पटवारी के कमरे में घुस जातीं और उससे लिपटने लगतीं। ठकुराइन ने एक दिन अचार का मर्तबान खोला तो उसमें गोबर और कीचड़ भरा हुआ था। जिस झाँपी में मोतीचूर के लड्डू थे उसमें ईंटें थीं।''6** इस तरह हीरालाल के भूत से सब डरने लगे। उसे भगाने के लिए जादू–टोना या तांत्रिक विद्या जानने वालों का वहाँ जमावड़ा होने लगा।

'छप्पन तोले का करघन' में भी हमें कुछ इसी तरह के सामाजिक परिवेश के दर्शन होते हैं। इसमें गाँव की औरतों का विश्वास है कि दादी ने नाइन से टोना–टोटका सीखा हुआ है और वह अपना बाल बच्चों के शरीर में चिपकाकर उनका खून पी जाती है। इसलिए चाची बच्चों को दादी के पास जाने से मना करती हैं। गाँव के लोगों का विश्वास कि यदि टोना–टोटका ढंग से न किया जाए तो उसके दुष्परिणाम होते हैं, हूबहू दादी पर चरितार्थ होता है। **''जब दादी जवान थी और सुंदर थीं। उनका मेलजोल गाँव की नाइन के साथ हो गया था। नाइन टोना जानती थी और उससे थोड़ा बहुत दादी ने भी सीख लिया था। लेकिन किसी–किसी पर टोना उलट जाता है। दादी के साथ यही हुआ था। उनकी सुंदर देह, धूप में निकलते ही जिस पर फफोले पड़ जाते थे और जिससे गर्मियों की रात में बेले की गंध फूटती थी–वह शरीर टोना उलट जाने से ताँबई और फिर कत्थई हो गया था। उनके एक के बाद एक, तेरह बच्चे हुए थे। जिनमें से सिर्फ पिताजी, जसीड़ीह वाली बुआ और चाचा जिंदा बचे थे। चाची बतलाती थीं कि दादी का अधूरा टोना ही बच्चों को खा जाता था। यह दादी के टोने का असर था, कि पिताजी और चाचा कभी घर में नहीं टिक पाते थे।''7** कई बार घर की तंगहाली भी ऐसी स्थिति में ला खड़ा करती है। इस कहानी में यही दर्शाया गया है कि किस प्रकार आर्थिक रूप से अभावग्रस्त परिवार जादू–टोने में विश्वास करने लगता है और अपनी वर्तमान हालत को उस सबके लिए जिम्मेदार मानता है। असम की कुँजड़िन द्वारा चाचा जी को बैल बनाकर बांधकर रखना भी इसी अंधविश्वास का जीता–जागता उदाहरण है।

जातिवाद, जातिगत भेदभाव, ऊँच–नीच और अस्पृश्यता की समस्या आज़ादी के इतने साल बाद भी हमारे समाज में पाँव पसारे हुए है। इससे हमारा समाज पूर्णतः मुक्त नहीं हो पाया है। सदियों पहले सामाजिक अनुशासन के लिए जिस वर्णात्मक व्यवस्था की स्थापना हुई थी, समय के साथ वह कुरीतियों में बदलती गई। उदय प्रकाश ने इन सामाजिक बुराइयों का अंत करने के लिए भी अपनी कहानियों को इसका माध्यम बनाया है। उदय प्रकाश की कहानियों पर टिप्पणी करते हुए डॉ. सुरेखा तांबे कहती हैं–**''निम्न वर्ग के उत्थान की बातें करने वाले तथाकथित बड़े लोगों के मन में संभवतः उनके प्रति घृणा का भाव रहता है। इससे सामाजिक संतुलन में बाधा पड़ती है। उदय प्रकाश ने अपने समय में, अपने परिवेश में स्थित इस विसंगति पर अपनी कहानियों के माध्यम से सकारात्मक टिप्पणी प्रस्तुत की है। साथ ही इन कहानियों में दलित जीवन की दरिद्रता, दीन–हीनता, विवशता और दुःख के दृश्य उभरे हैं। इन कहानियों को पढ़कर उग्र, दाहक और भयानक अनुभवों का तीव्र अहसास होता है।''8**

'मोहनदास' कहानी के माध्यम से उदय प्रकाश ने समाज में फैले जाति–व्यवस्था के घिनौने चेहरे को उजागर किया है। मोहनदास एक कबीरपंथी बंसहर पलिहा नीची जात का माना जाता है। यह जाति अनुसूचित है, आदिवासी या आदिम जन–जाति, यह सरकारी गजट में स्पष्ट नहीं किया गया है। अव्वल शिक्षा ग्रहण करने और प्रथम स्थान लेने के बावजूद जाति आधार पर उसके साथ कदम–कदम पर भेदभाव होता है। उसे शिक्षाकर्मी का अस्थायी काम मिल सकता था लेकिन यहाँ भी उसकी जाति उसके आड़े आ जाती है। लेखक के अनुसार, **''लेकिन बाद में पता चला कि जिस अफसर के अधीन यह काम था वह अपनी जाति या एक दो राजनीति पार्टियों के लोगों को ही उसमें भर्ती कर रहा था। मोहनदास नीची जाति का था और किसी भी पार्टी का सदस्य नहीं था।''9** जाति का दंश वह पूरी जिंदगी झेलता है और उच्च जाति के उसके दोस्त उसका पूरी ज़िंदगी मज़ाक उड़ाते हैं तथा एक पढ़े–लिखे और काबिल बनने लायक इंसान की ज़िंदगी को नरक बना देते हैं।

'पीली छतरी वाली लड़की' में भी जाति आधारित भ्रष्टाचार अपनी चरम पर है। विश्वविद्यालय के हिन्दी और संस्कृत जैसे विभागों पर जाति विशेष का कब्ज़ा है। वहाँ के ज्यादातर प्राध्यापक एक विशेष जाति से संबंध रखते हैं और टाइटल देखकर ही प्रवेश की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया जाता है। राहुल का अंजलि के साथ प्रेम और शारीरिक संबंध भी इसी जातिगत घृणा को बल प्रदान करता है। सब जगह सम्प्रदाय या जाति विशेष का बोलबाला है। बतौर उदय प्रकाश–**''वे 'क्रिटर्स' थे। सबसे पहले उन्होंने पृथ्वी के इस हिस्से के सूरज को खाकर इतिहास में एक ऐसा अंधेरा पैदा कर डाला था, जिसके भीतर कोई उनके चलते हुए शाश्वत भूखे जबड़ों और चमकीले, धारदार, विषैले दाँतों को न देख सके, उन्होंने बुद्ध को खा डाला था, जातक कथाओं, उपनिषदों और लोकगाथाओं को खा डाला था। उन्होंने ईसा, मूसा, पीर–पैगम्बर, सूफी–संत सबको चट करके, उनकी हड्डियों की खाद बनाकर, उसे अपने उन विषैले पेड़–पौधों की जड़ों में डाल दिया था, जिनके फल सदियों से धरती के इस हिस्से में रहने वाले करोड़ों भोले–भाले निवासियों के संस्कारों में लटके हुए थे।''10** कहानी में जाति व्यवस्था के तार इतने सघन हैं कि जब राहुल और अंजलि अंतरविवाह का फैसला लेते हैं और रेलगाड़ी से भाग जाते हैं तो राहुल को सपने में भी अंजलि का भाई और गुंडे मार रहे होते हैं। यह दर्शाता है कि भारतीय समाज की जाति व्यवस्था ने किस हद तक समाज के मन में डर पैदा किया हुआ है।

धर्म और परंपरा का सदियों से अटूट संबंध रहा है। धर्म के नियमों का पालन करना ही लंबे अरसे के बाद परंपरा का रूप ले लेता है। ग्रामीण लोग परंपराओं को खूब महत्त्व देते हैं। वहाँ पर परंपरा का पालन न करने पर धार्मिकता पर आघात माना जाता है। इसका लाभ ढोंगी, पाखंडी, धूर्त और स्वार्थी लोग उठाते हैं। उन्होंने परंपराओं को धार्मिक रूढ़ियों में बदल दिया है। आज परंपरा तार–तार होकर बिखर रही हैं। विवाह जैसी पवित्र सामाजिक परंपरा भी इससे अछूती नहीं बची है। परिणामस्वरूप सामाजिक विघटन पैदा होता है। 'दिल्ली की दीवार' कहानी में रामनिवास विवाह रूपी सामाजिक पवित्र बंधन का पालन नहीं

करता और विवाहेतर संबंध बनाता है। कहानी अनुसार–**''अपनी पत्नी बबिया से उसकी रोज चखचख होती रहती थी। वह बच्चों को सम्भालने और घर के काम से ही फुरसत नहीं पाती थी। दोनों बच्चों में से कोई न कोई हमेशा बीमार रहा आता था।''11** इसलिए उसका पति सुषमा से अनैतिक संबंध बना लेता है और पता होने के बावजूद बबिया कोई विरोध नहीं करती। क्योंकि उसे पता है कि उसका पति उसे और बच्चों को छोड़कर कहीं नहीं जाएगा। और अंततः वैवाहिक संबंध में आस्था के अभाव और विवाहेतर संबंध में मौज–मस्ती रामनिवास की मौत और पारिवारिक विघटन का कारण बनती है। ठीक एक ऐसा ही प्रसंग 'मैंगोसिल' कहानी में भी मिलता है जो विवाह नामक पारंपरिक विश्वास को तार–तार करती है। चंद्रकांत के साथ रहने से पहले शोभा का विवाह रमाकांत से होता है और वह उसके साथ सारणी में रहती है। लेकिन रमाकांत को निष्कर्मण्य रहते ऐशो–आराम की जिदंगी जीने की लत है। अपनी लत को पूरा करने के लिए संपूर्ण लोकलाज़ और जिम्मेदारी से किनारा करके वह शोभा को गैर मर्दों–थानेदार और बिल्डर के हाथों सौंप

देता है। इससे शोभा की ज़िंदगी नारकीय बन जाती है। जिस दिन पार्टी होती, वह रात शोभा के लिए अमानवीय यंत्रणा और पीड़ा की रात होती। इस नरक से छुटकारा पाने के लिए वह चंद्रकांत से कहती है–**''बाकी तो मैं इधर नहीं दिखा सकती। कोई आ जाएगा। लेकिन जान लो, मैं मर जाऊँगी किसी रोज़। ये लोग किधर को भी मेरी बॉडी फेंक देंगे। तुम मेरे को कैसे भी बचा लो। किधर को भी ले चलो। मैं तुम्हारे कपड़े धो दिया करूंगी। झाड़ू–पोंछा कर दूंगी। रोज़ खाना बनाऊँगी और भांडे–बरतन माँजूंगी।''12** किसी विवाहित औरत का अपने मर्द से गुहार न करके किसी गैर मर्द से खुद को बचाने की गुहार लगाना विवाह जैसी संस्था के नैतिक और धार्मिक पतन की जीती जागती तस्वीर है और सभ्य समाज के मस्तक का कलंक भी। परंपरानुसार भारतीय समाज में अपने बुजुर्गों का सम्मान किया जाता है और उनकी सेवा सुश्रुषा की जाती है। लेकिन अभावग्रस्तता और गरीबी समाज की इस परंपरा को खाए जा रही है। 'छप्पन तोले का करघन' में लेखक ने इस परपंरा का एक विकट और विद्रूप रूप प्रस्तुत किया है, जो समाज के सामने भयावह रूप ले रहा है। घर में दादी का सम्मान तो दूर, उसे समय पर और ढंग का खाना भी मुहैया नहीं करवाया जाता। कहानी अनुसार–**''दादी दिनभर में सिर्फ एक बार खाना खाती थीं। जस्ते का एक बहुत पुराना, तुचका–पुचका भगोना था, उसी में दाल–भात, चटनी, सूखी मिर्च डाल दी जाती और अम्माँ उसे अँधियारी कोठरी की ड्योढ़ी पर रख आती थीं। कई–कई बार तो कई दिनों तक हर रोज़ भगोना ज्यों–का–त्यों भरा लौट आता, फिर उस खाने को काई नहीं खाता था। कई बार लोग दादी के बारे में बिल्कुल भूल जाते।''13** दादी को रहने के लिए भी अंधेरी कोठरी दी गई थी और न कोई उसकी साफ–सफाई करता था और न मिलने या हाल–चाल पूछने जाता था। यह हमारी सभ्यता का बिल्कुल नवीनतम और भ्रष्ट रूप है। ओल्डेज़ होम की संख्या समाज की इसी मनोवृत्ति के कारण दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इस कहानी के विषय में अपने विचार व्यक्त करते हुए हरिमोहन शर्मा अपने लेख 'छप्पन तोले का करघन : छीजते रिश्तों की टीस' में कहते हैं–**''गाँव समाज की विषम परिस्थितियों के बीच मनुष्य की मानसिक संरचना भी कुछ इस तरह हो जाती है कि वह भाग्य पर विश्वास करने लगता है। टोना–टोट्का–जादू भरा वातावरण चारों ओर फैल जाता है। उसकी आर्थिक स्थिति उसे मजबूर करती है कि वह एक ही दायरे में सोचे। पारम्परिक संबंध भी उसी की गिरफ़्त में आ जाते हैं। पाशविक स्थितियाँ मजबूत होती चली जाती हैं, मानवीय भाव मरने लगते हैं।''14**

'....और अंत में प्रार्थना' कहानी में धार्मिक आधार पर फैलने वाले उन्माद या दंगों का सजीव चित्र लेखक ने खींचा है। कहानी में तौफीक अहमद कोतमा की सांप्रदायिक शांति समिति का सदस्य था और घटनाक्रम के तनाव को कम करने की कोशिश कर रहा था, बावजूद इसके एस.डी.एम. द्वारा लड़के को जानने की जिज्ञासा को हवलदार पांडे ने धार्मिक कट्टरपन के चलते यह कहकर शांत किया–**''कटुआ है सर। कुंजडिन की औलाद। लड़कों को भड़का रहा है।''15** इसी वाक्य ने आग में घी का काम किया और एस.डी.एम. ने अपनी गाड़ी तथा खुद को बचाने के चक्कर में फायर का आदेश दे दिया। हवलदार पांडे को

योग्यता और वफादारी दिखाने का मौका मिल गया और उसने मुरारीलाल कांस्टेबल की राइफल छीनकर तौफीक अहमद पर फायर कर दिया और वह वहीं ढेर हो गया। ऐसी किसी घटना का सांप्रदायिक, धार्मिक हिंसा और राजनीतिक रूप लेना स्वाभाविक है। ठीक वैसा ही हुआ जिसकी आम आदमी उम्मीद रखता है और फलस्वरूप शांत कोतमा सांप्रदायिक आग में झुलसने लगा।

इस प्रकार उदय प्रकाश ने अपने कथा–साहित्य के माध्यम से समाज और परिवेश में फैले अंधविश्वास, रूढ़ियों, जातिगत भेदभाव, परंपराओं, धार्मिक द्वेष इत्यादि के कारण ग्रामीण लोगों के कष्टप्रद जीवन को वाणी दी है और पाखंडी एवं असामाजिक लोगों का पर्दाफाश करने का भरसक प्रयास किया है। उदय प्रकाश के कथा–साहित्य के बारे में डॉ. मीनाक्षी पाहवा लिखती हैं कि–**''कुल मिलाकर उदय प्रकाश का यह संग्रह (तिरिछ) अपने वस्तु और शिल्प से निश्चय ही समकालीन कहानी के संस्कार में एक सार्थक हस्तक्षेप है। जिसमें हमारे वर्तमान समाज के काले चेहरे की तीव्र भर्त्सना है और उसका निर्मम वस्तुपरक बयान भी। दूसरी तरफ अमानवीय हो जा रही दुनिया के खिलाफ मानवीय करूणा और संवेदना का आग्रह भी है। यही बात उन्हें विश्वसनीय बनाती है और उनकी कहानी यात्रा के भविष्य के प्रति पाठकों को आश्वस्त भी करती है।''16** कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि उदय प्रकाश का पूरा कथा–साहित्य विभिन्न कुरीतियों का विरोध करता हुआ, आम आदमी को सजग करता हुआ अमानवीय होते जा रहे समाज में धार्मिक संवदनाओं के माध्यम से करूणा और संवेदना जगाने का काम करता प्रतीत होता है।

संदर्भः–

1. डॉ. भटनागर–सामाजिक जीवन और साहित्य, विकास प्रकाशन, कानपुर–1991, पृष्ठ 13
2. डॉ. अशोक चव्हाण–कहानीकार महीप सिंह : संवेदना और शिल्प, चन्द्रलोक प्रकाशन, कानपुर–2011, पृष्ठ 199
3. उदय प्रकाश–तिरिछ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–2013, पृष्ठ 25
4. –वही– पृष्ठ 26
5. –वही– पृष्ठ 138
6. –वही– पृष्ठ 140–141
7. –वही– पृष्ठ 50
8. डॉ. सुरेखा तांबे–कृष्णा सोबती के कथा साहित्य में चित्रित ग्रामीण जीवन, पूजा पब्लिकेशन, कानपुर–2011, पृष्ठ 113
9. उदय प्रकाश–मोहनदास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–2013, पृष्ठ 14
10. उदय प्रकाश–पीली छतरी वाली लड़की, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–2011, पृष्ठ 55–56
11. उदय प्रकाश–दत्तात्रेय के दुःख, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–2006, पृष्ठ 67
12. उदय प्रकाश–मैंगोसिल, पेंगुइन बुक्स, गुड़गाँव–2014, पृष्ठ 98
13. उदय प्रकाश–तिरिछ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–2013, पृष्ठ 52
14. शीतल वाणी पत्रिका, अगस्त–अक्तूबर 2012, पृष्ठ 181
15. उदय प्रकाश–और अंत में प्रार्थना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–2006, पृष्ठ 182
16. डॉ. मीनाक्षी पाहवा–समकालीन हिन्दी कहानी, के. के. पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली–2007, पृष्ठ 123